प्राचीन भारत के महान वैज्ञानिक-२

Avinash Kumar
Assistant Professor & Head
Department of History
Patna College, Patna-800005
Mobile No. 6202393206
E-mail Id: avinashisavailable@gmail.com

1784 में जब विलियम जोन्स ने इंग्लिश में भारतीय उपनिषदों का अनुवाद किया तो उन्होंने उसको अग्रसारित करने का अनुरोध उस समय के गवर्नर-जनरल वारेन हैस्टिंग्स से किया। कई दिनों तक अनूदित ग्रंथ को पढ़ने के बाद उसने जो टिप्पणी लिखी, वह हर देशप्रेमी भारतीय के लिए गौरव के साथ राष्ट्रीय विमर्श की बात थी। उसने लिखा था, "इन किताबों को देखकर ऐसा लगता है कि ये किताबें इंसानी रचनाएँ न होकर दैवीय रचनाएँ हैं.....लेकिन आज के भारतीयों को देखकर नही लगता कि ये इन्ही देवपुरुषों की सन्तानें हैं....।"

सिर्फ वैचारिक स्तर पर ही नही वैज्ञानिक और बौद्धिक स्तर पर भारतीयों ने जिस ऊंचाई को हासिल किया था, उस समय के यूरोप के लिए उस ऊंचाई को पाने की बात कल्पनातीत थी। खगोल, चिकित्सा-उपचार और शल्य,गणित-ज्यामिति, क्षेत्रमिति, त्रिकोणमिति,ज्योतिष,दर्शन, तर्क, मीमांसा-हर क्षेत्र में भारतीयों ने अतुलनीय ऊंचाई हासिल कर रखी थी। मार्क ट्वेन ने माना था कि जीवन का ऐसा कोई प्रश्न नही था जिस पर भारतीयों ने चिंतन-मनन न किया था।

ये तमाम बातें सिर्फ बौद्धिक विलास के लिए नहीं हैं, बल्कि प्राचीन भारत के मनीषियों के योगदान की निरपेक्ष चर्चा की जाय तो इन्हें बखूबी साबित किया जा सकता है। विश्व के रंगमंच पर अनेक देश हैं। इतिहास की गहराइयों में जाकर हम झांकते हैं तो जो दृश्य हमारे नेत्रों के सामने उभरता है वह यह कि भारत सदियों से विश्व में मानव जाति के लिए प्रेरणा का केन्द्र रहा है। हमारे पूर्वजों ने 'कृण्वन्तो विश्वम्आर्यम्' अर्थात् सम्पूर्ण विश्व को श्रेष्ठ बनाएंगे और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' संपूर्ण वसुधा एक कुटुम्ब है तथा 'स्वदेशो भुवनत्रयम्' तीनों लोक हमारे लिए स्वदेश हैं, की उदात्त भावना ले सम्पूर्ण विश्व में संचार किया तथा विश्व की सुख, समृद्धि हेतु कला, कौशल तथा दर्शन का अवदान दिया। इसी कारण भारत प्राचीन काल से जगद्गुरु कहलाता रहा, जिसकी झलक पाश्चात्य चिंतक मार्क ट्वेन के निम्न वक्तव्य में दिखाई देती है- 'भारत उपासना पंथों की भूमि, मानव जाति का पालना, भाषा की जन्मभूमि, इतिहास की माता, पुराणों की दादी एवं परंपरा की परदादी है। मनुष्य के इतिहास में जो भी मूल्यवान एवं सृजनशील सामग्री है, उसका भंडार अकेले भारत में है। यह ऐसी भूमि है जिसके दर्शन के लिए सब लालायित रहते हैं और एक बार उसकी हल्की सी झलक मिल जाए तो दुनिया के अन्य सारे दृश्यों के बदले में भी वे उसे छोड़ने के लिए तैयार नही होंगे।"

उपर्युक्त बातें एक बानगी भर हैं कि भारत की प्राचीन परम्पराएँ कितनी समृद्ध और सशक्त थीं, जिन पर कोई भी भारतीय गर्व का अहसास कर सकता है। पर इसी के साथ यह जानना भी जरूरी हो जाता है कि प्राचीन भारत में कौन-से ऐसे लोग थे जिन्होंने असंभव लगनेवाली बौद्धिक और वैज्ञानिक ऊंचाई को हासिल किया था? तो ऐसे में निम्नलिखित मनीषियों का नाम लिया जा सकता है:

चरक

चरक एक महर्षि एवं आयुर्वेद विशारद के रूप में विख्यात हैं। वे कुषाण राज्य के राजवैद्य थे। इनके द्वारा रचित चरक संहिता एक प्रसिद्ध आयुर्वेद ग्रन्थ है। इसमें रोगनाशक एवं रोगनिरोधक दवाओं का उल्लेख है तथा सोना, चाँदी, लोहा, पारा आदि धातुओं के भस्म एवं उनके उपयोग का वर्णन मिलता है। आचार्य चरक ने आचार्य अग्निवेश के अग्निवेशतन्त्र में कुछ स्थान तथा अध्याय जोड्कर उसे नया रूप दिया जिसे आज चरक संहिता के नाम से जाना जाता है ।300-200 ई. पूर्व लगभगआयुर्वेद के आचार्य महर्षि चरक की गणना भारतीय औषधि विज्ञान के मूल प्रवर्तकों में होती है।चरक की शिक्षा तक्षशिला में हुई ।इनका रचा हुआ ग्रंथ 'चरक संहिता' आज भी वैद्यक का अद्वितीय ग्रंथ माना जाता है। इन्हें ईसा की प्रथम शताब्दी का बताते हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि चरक कनिष्क के राजवैद्य थे परंतु कुछ लोग इन्हें बौद्ध काल से भी पहले का मानते हैं।आठवीं शताब्दी में इस ग्रंथ का अरबी भाषा में अनुवाद हुआ और यह शास्त्र पश्चिमी देशों तक पहुंचा।चरक संहिता में व्याधियों के उपचार तो बताए ही गए हैं, प्रसंगवश स्थान-स्थान पर दर्शन और अर्थशास्त्र के विषयों की भी उल्लेख है।उन्होंने आयुर्वेद के प्रमुख ग्रन्थों और उसके ज्ञान को इकट्ठा करके उसका संकलन किया । चरक ने भ्रमण करके चिकित्सकों के साथ बैठकें की , विचार एकत्र किए और सिद्धांतों को प्रतिपादित किया और उसे पढ़ाई लिखाई के योग्य बनाया। चरकसंहिता आयुर्वेद में प्रसिद्ध है। इसके उपदेशक अत्रिपुत्र पुनर्वसु, ग्रंथकर्ता अग्निवेश और प्रतिसंस्कारक चरक हैं।

प्राचीन वाङ्मय के परिशीलन से ज्ञात होता है कि उन दिनों ग्रंथ या तंत्र की रचना शाखा के नाम से होती थी। जैसे कठ शाखा में कठोपनिषद् बनी। शाखाएँ या चरण उन दिनों के विद्यापीठ थे, जहाँ अनेक विषयों का अध्ययन होता था। अत: संभव है, चरकसंहिता का प्रतिसंस्कार चरक शाखा में हुआ हो।

चरकसंहिता में पालि साहित्य के कुछ शब्द मिलते हैं, जैसे अवक्रांति, जेंताक (जंताक - विनयपिटक), भंगोदन, खुड्डाक, भूतधाली (निद्रा के लिये)। इससे चरकसंहिता का उपदेशकाल उपनिषदों के बाद और बुद्ध के पूर्व निश्चित होता है। इसका प्रतिसंस्कार कनिष्क के समय 78 ई. के लगभग हुआ।

त्रिपिटक के चीनी अनुवाद में कनिष्क के राजवैद्य के रूप में चरक का उल्लेख है। किंतु कनिष्क बौद्ध था और उसका कवि अश्वघोष भी बौद्ध था, पर चरक संहिता में बुद्धमत का जोरदार खंडन मिलता है। अत: चरक और कनिष्क का संबंध संदिग्ध ही नहीं असंभव जान पड़ता है। पर्याप्त प्रमाणों के अभाव में मत स्थिर करना कठिन है।

सुश्रुत

सुश्रुत प्राचीन भारत के महान चिकित्साशास्त्री एवं शल्यचिकित्सक थे। उनको शल्य चिकित्सा का जनक कहा जाता है।

शल्य चिकित्सा (Surgery) के पितामह और 'सुश्रुत संहिता' के प्रणेता आचार्य सुश्रुत का जन्म छठी शताब्दी ईसा पूर्व में काशी में हुआ था। इन्होंने धन्वन्तरि से शिक्षा प्राप्त की। सुश्रुत संहिता को भारतीय चिकित्सा पद्धति में विशेष स्थान प्राप्त है।

सुश्रुत संहिता में सुश्रुत को विश्वामित्र का पुत्र कहा है। 'विश्वामित्र' से कौन से विश्वामित्र अभिप्रेत हैं, यह स्पष्ट नहीं। सुश्रुत ने काशीपति दिवोदास से शल्यतंत्र का उपदेश प्राप्त किया था। काशीपति दिवोदास का समय ईसा पूर्व की दूसरी या तीसरी शती संभावित है। सुश्रुत के सहपाठी औपधेनव, वैतरणी आदि अनेक छात्र थे। सुश्रुत का नाम नावनीतक में भी आता है। अष्टांगसंग्रह में सुश्रुत का जो मत उद्धृत किया गया है; वह मत सुश्रुत संहिता में नहीं मिलता; इससे अनुमान होता है कि सुश्रुत संहिता के सिवाय दूसरी भी कोई संहिता सुश्रुत के नाम से प्रसिद्ध थी।

सुश्रुत के नाम पर आयुर्वेद भी प्रसिद्ध हैं। यह सुश्रुत राजर्षि शालिहोत्र के पुत्र कहे जाते हैं (शालिहोत्रेण गर्गेण सुश्रुतेन च भाषितम् - सिद्धोपदेशसंग्रह)। सुश्रुत के उत्तरतंत्र को दूसरे का बनाया मानकर कुछ लोग प्रथम भाग को सुश्रुत के नाम से कहते हैं; जो विचारणीय है। वास्तव में सुश्रुत संहिता एक ही व्यक्ति की रचना है। सुश्रुत संहिता में शल्य चिकित्सा के विभिन्न पहलुओं को विस्तार से समझाया गया है। शल्य क्रिया के लिए सुश्रुत 125 तरह के उपकरणों का प्रयोग करते थे। ये उपकरण शल्य क्रिया की जटिलता को देखते हुए खोजे गए थे। इन उपकरणों में विशेष प्रकार के चाकू, सुइयां, चिमटियां आदि हैं। सुश्रुत ने 300 प्रकार की ऑपरेशन प्रक्रियाओं की खोज की। सुश्रुत ने कॉस्मेटिक सर्जरी में विशेष निपुणता हासिल कर ली थी। सुश्रुत नेत्र शल्य चिकित्सा भी करते थे। सुश्रुतसंहिता में मोतियाबिद के ओपरेशन करने की विधि को विस्तार से बताया गया है। उन्हें शल्य क्रिया द्वारा प्रसव कराने का भी ज्ञान था। सुश्रुत को टूटी हुई हड्डियों का पता लगाने और उनको जोडने में विशेषज्ञता प्राप्त थी। शल्य क्रिया के दौरान होने वाले दर्द को कम करने के लिए वे मद्यपान या विशेष औषधियां देते थे। मद्य संज्ञाहरण का कार्य करता था। इसलिए सुश्रुत को संज्ञाहरण का पितामह भी कहा जाता है। इसके अतिरिक्त सुश्रुत को मधुमेह व मोटापे के रोग की भी विशेष जानकारी थी। सुश्रुत श्रेष्ठ शल्य चिकित्सक होने के साथ-साथ श्रेष्ठ शिक्षक भी थे। उन्होंने अपने शिष्यों को शल्य चिकित्सा के सिद्धांत बताये और शल्य क्रिया का अभ्यास कराया। प्रारंभिक अवस्था में शल्य क्रिया के अभ्यास के लिए फलों, सब्जियों और मोम के पुतलों का उपयोग करते थे। मानव शारीर की अंदरूनी रचना को समझाने के लिए सुश्रुत शव के ऊपर शल्य क्रिया करके अपने शिष्यों को समझाते थे। सुश्रुत ने शल्य चिकित्सा में अद्भुत कौशल अर्जित किया तथा इसका ज्ञान अन्य लोगों को कराया। इन्होंने शल्य चिकित्सा के साथ-साथ आयुर्वेद के अन्य पक्षों जैसे शरीर सरंचना, काय चिकित्सा, बाल रोग, स्त्री रोग, मनोरोग आदि की जानकारी भी दी।

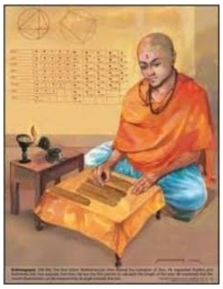

श्रीधराचार्य (श्रीधर आचार्य)

श्रीधराचार्य (जन्म : 750 ई) प्राचीन भारत के एक महान गणितज्ञ थे। इन्होंने शून्य की व्याख्या की तथा द्विघात समीकरण को हल करने सम्बन्धी सूत्र का प्रतिपादन किया।

उनके बारे में हमारी जानकारी बहुत ही अल्प है। उनके समय और स्थान के बारे में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। किन्तु ऐसा अनुमान है कि उनका जीवनकाल 870 ई से 930 ई के बीच था; वे वर्तमान हुगली जिले में उत्पन्न हुए थे; उनके पिताजी का नाम बलदेवाचार्य औरा माताजी का नाम अच्चोका था।

इन्होंने 750 ई. के लगभग दो प्रसिद्ध पुस्तकें, त्रिशतिका (इसे 'पाटीगणितसार' भी कहते हैं), पाटीगणित और गणितसार, लिखीं। इन्होंने बीजगणित के अनेक महत्वपूर्ण आविष्कार किए। वर्गात्मक समीकरण को पूर्ण वर्ग बनाकर हल करने का इनके द्वारा आविष्कृत नियम आज भी 'श्रीधर नियम' अथवा 'हिंदू नियम' के नाम से प्रचलित है।

'पाटीगणित, पाटीगणित सार और त्रिशतिका उनकी उपलब्ध रचनाएँ हैं जो मूलतः अंकगणित और क्षेत्र-व्यवहार से संबंधित हैं। भास्कराचार्य ने बीजगणित के अंत में - ब्रह्मगुप्त, श्रीधर और पद्मनाभ के बीजगणित को विस्तृत और व्यापक कहा है - :'ब्रह्माह्वयश्रीधरपद्मनाभबीजानि यस्मादतिविस्तृतानि'। इससे प्रतीत होता है कि श्रीधर ने बीजगणित पर भी एक वृहद् ग्रन्थ की रचना की थी जो अब उपलब्ध नहीं है। भास्कर ने ही अपने बीजगणित में वर्ग समीकरणों के हल के लिए श्रीधर के नियम को उद्धृत किया है –

चतुराहतवर्गसमै रुपैः पक्षद्वयं गुणयेत।
अव्यक्तवर्गरुपैर्युक्तौ पक्षौ ततो मूलम् ॥

अन्य सभी भारतीय गणिताचार्यों की तुलना में श्रीधराचार्य द्वारा प्रस्तुत शून्य की व्याख्या सर्वाधिक स्पष्ट है। उन्होने लिखा है-यदि किसी संख्या में शून्य जोड़ा जाता है तो योगफल उस संख्या के बराबर होता है; यदि किसी संख्या से शून्य घटाया जाता है तो परिणाम उस संख्या के बराबर ही होता है; यदि शून्य को किसी भी संख्या से गुणा किया जाता है तो गुणनफल शून्य ही होगा। उन्होने इस बारे में कुछ भी नहीं कहा है कि किसी संख्या में शून्य से भाग करने पर क्या होगा। किसी संख्या को भिन्न (fraction) द्वारा भाजित करने के लिये उन्होने बताया है कि उस संख्या में उस भिन्न के व्युत्क्रम (reciprocal) से गुणा कर देना चाहिये।

उन्होने बीजगणित के व्यावहारिक उपयोगों के बारे में लिखा है और बीजगणित को अंकगणित से अलग किया। उन्होने गोले के आयतन का निम्नलिखित सूत्र दिया है-

गोलव्यासघनार्धं स्वाष्टादशभागसंयुतं गणितम्। (गोल व्यास घन अर्धं स्व अष्टादश भाग संयुतं गणितम्) अर्थात $V = d3/2 + (d3/2)/18 = 19\, d3/36$

गोले के आयतन $\pi\, d3 / 6$ से इसकी तुलना करने पर पता चलता है कि उन्होने पाई के स्थान पर 19/6 लिया है।

वर्ग समीकरण का हल प्रस्तुत करने वाले आरम्भिक गणितज्ञों में श्रीधराचार्य का नाम अग्रणी है।

$ax2 + bx + c = 0$

$4a2x2 + 4abx + 4ac = 0$; (4a से गुणा करने पर)

$4a2x2 + 4abx + 4ac + b2 = 0 + b2$; (दोनों पक्षों में b2 जोड़ने पर)

$(4a2x2 + 4abx + b2) + 4ac = b2$

$(2ax + b)(2ax + b) + 4ac = b2$

$(2ax + b)2 = b2 - 4ac$

$(2ax + b)2 = (\sqrt{D})2$; $(D = b2-4ac)$

अतः x के दो मूल (रूट) निम्नलिखित हैं-

पहला मूल $\alpha = (-b - \sqrt{(b2-4ac)}) / 2a$

दूसरा मूल $\beta = (-b + \sqrt{(b2-4ac)}) / 2a$

नागार्जुन (रसायनशास्त्री)

नागार्जुन भारत के धातुकर्मी एवं रसशास्त्री (alchemist) थे। 11वीं शताब्दी में अल बरुनी के द्वारा लिखे दस्तावेजों के अनुसार वे 100 वर्ष पहले गुजरात के निकट दैहक नामक ग्राम में जन्मे थे। अर्थात उनका जन्म 10वीं शताब्दी के आरम्भ में हुआ था। जबकि चीनी और तिब्बती साहित्य के अनुसार वे 'वैदेह देश' (विदर्भ) में जन्मे थे और पास के सतवाहन वंश द्वारा शासित क्षेत्र में चले गये थे। इसके अलावा इतिहास में महायान सम्प्रदाय के दार्शनिक नागार्जुन तथा रसशास्त्री नागार्जुन में भी भ्रम की स्थिति बनी रहती है। महाराष्ट्र के नागलवाडी ग्राम में उनकी प्रयोगशाला होने के प्रमाण मिले हैं। कुछ प्रमाणों के अनुसार वे 'अमरता' की प्राप्ति की खोज करने में लगे हुए थे और उन्हें पारा तथा लोहा के निष्कर्षण का ज्ञान था।

द्वितीयक साहित्य में भी रसशास्त्री नागार्जुन के बारे में बहुत ही भ्रम की स्थिति है। पहले माना जाता था कि रसरत्नाकर नामक प्रसिद्ध रसशास्त्रीय ग्रन्थ उनकी ही रचना है किन्तु 1984 के एक अध्ययन में पता चला कि रसरत्नाकर की पाण्डुलिपि में एक अन्य रचनाकार (नित्यानन्द सिद्ध) का नाम आया है।

नागार्जुन का जन्म सन् 931 में गुजरात में सोमनाथ के निकट दैहक नामक किले में हुआ था। वह रसायनज्ञ आर्थत कीमियागर थे। लोग उनके बारे में ढ़ेर सारी कहानियां कहते थे। उससे उन्हें कभी व्याकुलता या परेशानी नहीं हुई थी। इस लोक-विश्वास को कि वह भगवान के संदेशवाहक हैं, रसरत्नाकर नामक पुस्तक लिख कर पुष्ट कर दिया। यह पुस्तक उनके और देवताओं के बीच बातचीत की शैली में लिखी गई थी। रसरत्नाकर में रस (पारे के यौगिक) बनाने के प्रयोग दिए गये हैं। इसमें देश में धातुकर्म और कीमियागरी के स्तर का सर्वेक्षण भी दिया गया था। इस पुस्तक में चांदी, सोना, टिन और तांबे की कच्ची धातु निकालने और उसे शुद्ध करने के तरीके भी बताये गए हैं।

पारे से संजीवनी और अन्य पदार्थ बनाने के लिए नागार्जुन ने पशुओं और वनस्पति तत्वों और अम्ल और खनिजों का भी इस्तेमाल किया। हीरे, धातु और मोती घोलने के लिए उन्होंने वनस्पति से बने तेजाबों का सुझाव दिया। उसमें खट्टा दलिया, पौधे और फलों के रस थे। उन्होंने और पहले के कीमियागरों ने जिन उपकरणों का इस्तेमाल किया था उसकी सूची भी पुस्तक में दी गई है। आसवन (डिस्टीलेशन), द्रवण (लिक्वीफेक्शन), उर्ध्वपातन (सबलीमेशन) और भूनने के बारे में भी पुस्तक मे वर्णन है। पुस्तक में विस्तारपूर्ण दिया गया है कि अन्य धातुएं सोने में कैसे बदल सकती हैं। यदि सोना न भी बने रसागम विशमन द्वारा ऐसी धातुएं बनाई जा सकती हैं जिनकी पीली चमक सोने जैसी ही होती थी। हिंगुल और टिन जैसे केलमाइन से पारे जैसी वस्तु बनाने का तरीका दिया गया है।

नागार्जुन ने सुश्रुत संहिता के पूरक के रूप में 'उत्तर तन्त्र' नामक पुस्तक भी लिखी। इसमें दवाइयां बनाने के तरीके दिये गये हैं। आयुर्वेद की एक पुस्तक `आरोग्यमंजरी' भी लिखी। उनकी अन्य पुस्तकें है- कक्षपूत तन्त्र, योगसर और योगाष्टक।

निम्नलिखित पाण्डुलिपियाँ किसी 'नागार्जुन' द्वारा रचित होना बतायी जाती हैं-

जीवसूत्र

रसवैशेषिकसूत्र

योगशतक

कक्षपुट

योगरत्नमाला

यद्यपि 'रसरत्नाकर' नामक ग्रन्थ का रचयिता रसायनशास्त्री नागार्जुन को ही माना जाता रहा है किन्तु 1984 में पाण्डुलिपियों एवं प्रिन्ट सामग्री के अध्ययन से यह बात सामने आयी कि रसरत्नाकर की पाण्डुलिपि में किसी नित्यनाथ सिद्ध का नाम बार-बार उसके रचनाकार के रूप में आया है।

पिगल

पिगल भारत के प्राचीन गणितज्ञ और छन्दःसूत्रम् के रचयिता। इनका काल 400 ईपू से 200 ईपू अनुमानित है। जनश्रुति के अनुसार यह पाणिनि के अनुज थे। छन्द:सूत्र में मेरु प्रस्तार (पास्कल त्रिभुज), द्विआधारी संख्या (binary numbers) और द्विपद प्रमेय (binomial theorem) मिलते हैं।

छन्दःसूत्रम् पिगल द्वारा रचित छन्द का मूल ग्रन्थ है और इस समय तक उपलब्ध है। यह सूत्रशैली में है और बिना भाष्य के अत्यन्त कठिन है। इसपर टीकाएँ तथा व्याख्याएँ हो चुकी हैं। यही छन्दशास्त्र का सर्वप्रथम ग्रन्थ माना जाता है। इसके पश्चात् इस शास्त्र पर संस्कृत साहित्य में अनेक ग्रन्थों की रचना हुई।

दसवीं शती में हलायुध ने इस पर 'मृतसञ्जीवनी' नामक भाष्य की रचना की। इस ग्रन्थ में पास्कल त्रिभुज का स्पष्ट वर्णन है। इस ग्रन्थ में इसे 'मेरु-प्रस्तार' कहा गया है। इसमें आठ अध्याय हैं।

पिङ्गल ने छन्दसूत्र में विविध छन्दों का वर्णन किया है। छन्दों का आधार लघु और गुरु का विशिष्ट अनुक्रम तथा उनकी कुल संख्या (मात्रा) है। इसलिए किसी श्लोक में लघु और गुरु के अनुक्रम का वर्णन और उसका विश्लेषण पिगल के छन्दसूत्र का मुख्य प्रतिपाद्य है। उन्होने विभिन्न अनुक्रमों का वर्णन किया है और उनका नामकरण किया है। छन्दसूत्र के अन्त में पिङ्गल ने कई नियम दे हैं जिनकी सहायता से 'n' मात्रा वाले श्लोक के सभी सम्भव लघु-गुरु अनुक्रमों को लिखा जा सकता है। इसी तरह के कई नियम (विधियाँ) दी गयी हैं। दूसरे शब्दों में , पिङ्गल ने छन्द्रशास्त्र के सांयोजिकी की गणितीय समस्या (combinatorial mathematics) का हल दिया है।

बाद में, लगभग 8वीं शताब्दी में, केदार भट्ट ने वृत्तरत्नाकर नामक एक छन्दशास्त्रीय ग्रन्थ की रचना की जो अवैदिक छन्दों से सम्बन्धित था। यह ग्रन्थ पिगल के छन्दसूत्र का भाष्य नहीं है बल्कि एक स्वतन्त्र रचना है। इस ग्रन्थ के अन्तिम अध्याय (6ठे अध्याय) में सांयोजिकी से सम्बन्धित नियम दिए गये हैं जो पिङ्गल के तरीके से बिल्कुल अलग हैं। 13वीं शताब्दी में हलायुध ने पिङ्गल के छन्दसूत्र पर 'मृतसञ्जीवनी' नामक टीका लिखी जिसमें उन्होने पिगल की विधियों को और विस्तार से वर्णन किया।

पिगल के छन्दशास्त्र में 8 अध्याय हैं। यह सूत्र-शैली में लिखा गया है। 8वें अध्याय में 35 सूत्र हैं। जिसमें से अन्तिम 16 सूत्र (8.20 से 8.35 तक) संयोजिकी से सम्बन्धित हैं। केदारभट्ट द्वारा रचित वृत्तरत्नाकर में 6 अध्यaय हैं जिसका 6ठा अध्याय पूरी तरह से संयोजिकी के कलनविधियों को समर्पित है।

द्विकौ ग्लौ 8.20

शब्दार्थ- एक अक्षर वाले छन्द के ग् - गुरु, ल् - लघु, द्विको - दो प्रकार के भेद होते हैं ॥

मिश्रौ च 8.21

शब्दार्थ- दो अक्षरात्मक पाद वाले छन्द का प्रस्तार करने पर द्विकौ अर्थात् दो बार आवृत्त, ग्लौ- गुरु और लघु अक्षर, मिश्रौ च- मिश्रित रूप से रखे जाते हैं । अर्थात् गुरु के साथ गुरु (ऽऽ), लघु के साथ गुरु (।ऽ), गुरु के साथ लघु (ऽ।) और लघु के साथ लघु (। ।) । इस प्रकार दो अक्षर वाले छन्द के 4 भेद हो जाते हैं ।

पृथग् ग्लोऽमिश्राः 8.22

शब्दार्थ- पृथक्- तीन अक्षरात्मक छन्द के प्रस्तार में तृतीय पंक्ति को पृथक् रखें । ग्लः द्विधाः- गुरु-लघु अक्षरों को पूर्व पंक्ति की अपेक्षा दुगुना करें, अमिश्राः- और उन्हें मिश्रित न करते हुए रखें । अर्थात् द्वितीय पंक्ति में 2 गुरु, 2 लघु का क्रम चला है, उसको तृतीय पंक्ति में दुगुना करके 4 गुरु, 4 लघु का क्रम चलावें। यह ध्यान रखें कि प्रथम पंक्ति में 1 गुरु, 1 लघु का क्रम है। द्वितीय पंक्ति में 2 गुरु, 2 लघु का क्रम है। तृतीय पंक्ति में दुगुना करने से 4 गुरु, 4 लघु का क्रम चलेगा ।

वसवस्त्रिकाः 8.23

शब्दार्थ- त्रिकोः - तीन अक्षरात्मक छन्द के प्रस्तार में, वसवः - वसु अर्थात् 8 भेद होते हैं। उनके ही नाम मगण आदि हैं।

वराहमिहिर

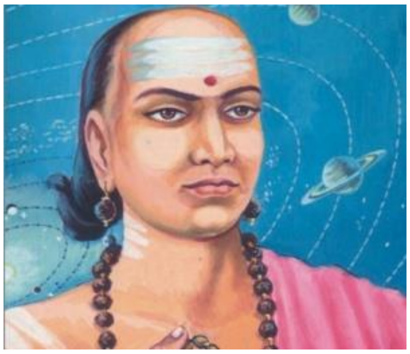

वराहमिहिर (वरःमिहिर) ईसा की पाँचवीं-छठी शताब्दी के भारतीय गणितज्ञ एवं खगोलज्ञ थे। वाराहमिहिर ने ही अपने पंचसिद्धान्तिका में सबसे पहले बताया कि अयनांश का मान 50.32 सेकेण्ड के बराबर है।

कापित्थक (उज्जैन) में उनके द्वारा विकसित गणितीय विज्ञान का गुरुकुल सात सौ वर्षों तक अद्वितीय रहा। वरःमिहिर बचपन से ही अत्यन्त मेधावी और तेजस्वी थे। अपने पिता आदित्यदास से परम्परागत गणित एवं ज्योतिष सीखकर इन क्षेत्रों में व्यापक शोध कार्य किया। समय मापक घट यन्त्र, इन्द्रप्रस्थ में लौहस्तम्भ के निर्माण और ईरान के शहंशाह नौशेरवाँ के आमन्त्रण पर जुन्दीशापुर नामक स्थान पर वेधशाला की स्थापना - उनके कार्यों की एक झलक देते हैं। वरःमिहिर का मुख्य उद्देश्य गणित एवं विज्ञान को जनहित से जोड़ना था। वस्तुतः ऋग्वेद काल से ही भारत की यह परम्परा रही है। वरःमिहिर ने पूर्णतः इसका परिपालन किया है।

वराहमिहिर का जन्म सन् 499 में एक निषाद परिवार में हुआ। यह परिवार उज्जैन में शिप्रा नदी के निकट कपित्थ(कायथा) नामक गांव का निवासी था। उनके पिता आदित्यदास निषाद सूर्य भगवान के भक्त थे। उन्हीं ने मिहिर को ज्योतिष विद्या सिखाई। कुसुमपुर (पटना) जाने पर युवा मिहिर महान खगोलज्ञ और गणितज्ञ आर्यभट्ट से मिले। इससे उसे इतनी प्रेरणा मिली कि उसने ज्योतिष विद्या और खगोल ज्ञान को ही अपने जीवन का ध्येय बना लिया। उस समय उज्जैन विद्या का केंद्र था। गुप्त शासन के अन्तर्गत वहां पर कला, विज्ञान और संस्कृति के अनेक केंद्र पनप रहे थे। वराह मिहिर इस शहर में रहने के लिये आ गये क्योंकि अन्य स्थानों के विद्वान भी यहां एकत्र होते रहते थे। समय आने पर उनके ज्योतिष ज्ञान का पता विक्रमादित्य चन्द्रगुप्त द्वितीय को लगा। राजा ने उन्हें अपने दरबार के नवरत्नों में शामिल कर लिया। मिहिर ने सुदूर देशों की यात्रा की, यहां तक कि वह यूनान तक भी गये। सन् 587 में महान गणितज्ञ वराहमिहिर की मृत्यु हो गई।

550 ई. के लगभग इन्होंने तीन महत्वपूर्ण पुस्तकें बृहज्जातक, बृहत्संहिता और पंचसिद्धांतिका, लिखीं। इन पुस्तकों में त्रिकोणमिति के महत्वपूर्ण सूत्र दिए हुए हैं, जो वराहमिहिर के त्रिकोणमिति ज्ञान के परिचायक हैं।

पंचसिद्धांतिका में वराहमिहिर से पूर्व प्रचलित पाँच सिद्धांतों का वर्णन है। ये सिद्धांत हैं : पोलिशसिद्धांत, रोमकसिद्धांत, वसिष्ठसिद्धांत, सूर्यसिद्धांत तथा पितामहसिद्धांत। वराहमिहिर ने इन पूर्वप्रचलित सिद्धांतों की महत्वपूर्ण बातें लिखकर अपनी ओर से 'बीज' नामक संस्कार का भी निर्देश किया है, जिससे इन सिद्धांतों द्वारा परिगणित ग्रह दृश्य हो सकें। इन्होंने फलित ज्योतिष के लघुजातक, बृहज्जातक तथा बृहत्संहिता नामक तीन ग्रंथ भी लिखे हैं। बृहत्संहिता में वास्तुविद्या, भवन-निर्माण-कला, वायुमंडल की प्रकृति, वृक्षायुर्वेद आदि विषय सम्मिलित हैं।

अपनी पुस्तक के बारे में वराहमिहिर कहते है: ज्योतिष विद्या एक अथाह सागर है और हर कोई इसे आसानी से पार नहीं कर सकता। मेरी पुस्तक एक सुरक्षित नाव है, जो इसे पढ़ेगा वह उसे पार ले जायेगी। यह कोरी शेखी नहीं थी। इस पुस्तक को अब भी ग्रन्थरत्न समझा जाता है।

कृतियों की सूची

पंचसिद्धान्तिका,

बृहज्जातकम्,

लघुजातक,

बृहत्संहिता

टिकनिकयात्रा

बृहद्यात्रा या महायात्रा

योगयात्रा या स्वल्पयात्रा

वृहत् विवाहपटल

लघु विवाहपटल

कुतूहलमंजरी

दैवज्ञवल्लभ

लग्नवाराहि

बराहमिहिर वेदों के ज्ञाता थे मगर वह अलौकिक में आंखे बंद करके विश्वास नहीं करते थे। उनकी भावना और मनोवृत्ति एक वैज्ञानिक की थी। अपने पूर्ववर्ती वैज्ञानिक आर्यभट्ट की तरह उन्होंने भी कहा कि पृथ्वी गोल है। विज्ञान के इतिहास में वह प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने कहा कि कोई शक्ति ऐसी है जो चीजों को जमीन के साथ चिपकाये रखती है। आज इसी शक्ति को गुरुत्वाकर्षण कहते है। लेकिन उन्होंने एक बड़ी गलती भी की। उन्हें विश्वास था कि पृथ्वी गतिमान नहीं है। अगर यह घूम रही होती तो पक्षी पृथ्वी की गति की विपरीत दिशा में (पश्चिम की ओर) कर अपने घोसले में उसी समय वापस पहुंच जाते।

वराहमिहिर ने पर्यावरण विज्ञान (इकालोजी), जल विज्ञान (हाइड्रोलोजी), भूविज्ञान (जिआलोजी) के संबंध में कुछ महत्वपूर्ण टिप्पणियां की। उनका कहना था कि पौधे और दीमक जमीन के नीचे के पानी को इंगित करते हैं। आज वैज्ञानिक जगत द्वारा उस पर ध्यान दिया जा रहा है। उन्होंने लिखा भी बहुत था। संस्कृत व्याकरण में दक्षता और छंद पर अधिकार के कारण उन्होंने स्वयं को एक अनोखी शैली में व्यक्त किया था। अपने विशद ज्ञान और सरस प्रस्तुति के कारण उन्होंने खगोल जैसे शुष्क विषयों को भी रोचक बना दिया है जिससे उन्हें बहुत ख्याति मिली। उनकी पुस्तक पंचसिद्धान्तिका (पांच सिद्धांत), बृहत्संहिता, बृहज्जात्क (ज्योतिष) ने उन्हें फलित ज्योतिष में वही स्थान दिलाया है जो राजनीति दर्शन में कौटिल्य का, व्याकरण में पाणिनि का है।

निम्ननिखित त्रिकोणमितीय सूत्र वाराहमिहिर ने प्रतिपादित किये हैं- ।

$$\sin^2 x + \cos^2 x = 1$$

$$\sin x = \cos\left(\frac{\pi}{2} - x\right)$$

$$\frac{1 - \cos 2x}{2} = \sin^2 x$$

वाराहमिहिर ने आर्यभट्ट प्रथम द्वारा प्रतिपादित ज्या सारणी को और अधिक परिशुद्धत बनाया।

वराहमिहिर ने शून्य एवं ऋणात्मक संख्याओं के बीजगणितीय गुणों को परिभाषित किया। वराहमिहिर 'संख्या-सिद्धान्त' नामक एक गणित ग्रन्थ के भी रचयिता हैं जिसके बारे में बहुत कम ज्ञात है। इस ग्रन्थ के बारे में पूरी जानकारी नहीं है क्योंकि इसका एक छोटा अंश ही प्राप्त हो पाया है। प्राप्त ग्रन्थ के बारे में पुराविदों का कथन है कि इसमें उन्नत अंकगणित, त्रिकोणमिति के साथ-साथ कुछ अपेक्षाकृत सरल संकल्पनाओं का भी समावेश है।

क्रमचय-संचय -

वराहमिहिर ने वर्तमान समय में पास्कल त्रिकोण (Pascal's triangle) के नाम से प्रसिद्ध संख्याओं की खोज की। इनका उपयोग वे द्विपद गुणाकों (binomial coefficients) की गणना के लिये करते थे। वराहमिहिर का प्रकाशिकी में भी योगदान है। उन्होने कहा है कि परावर्तन कणों के प्रति -प्रकीर्णन (back-scattering) से होता है। उन्होने अपवर्तन की भी व्याख्या की है।

शालिहोत्र

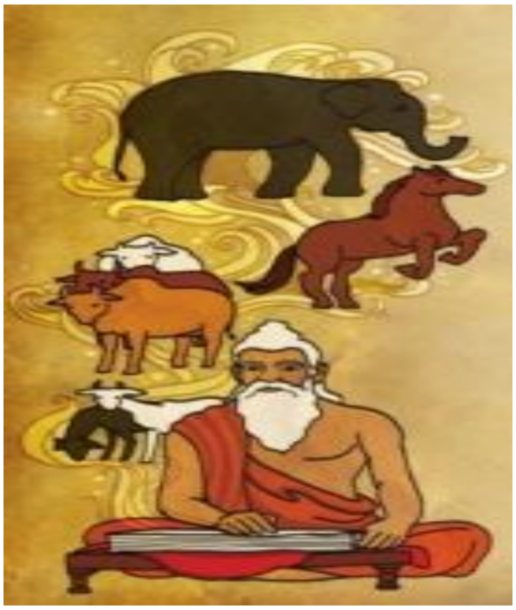

शालिहोत्र (2350 ईसापूर्व) हयगोष नामक ऋषि के पुत्र थे। वे पशुचिकित्सा (veterinary sciences) के जनक माने जाते हैं। उन्होंने 'शालिहोत्रसंहिता' नामक ग्रन्थ की रचना की। वे श्रावस्ती के निवासी थे।

संसार के इतिहास में घोड़े पर लिखी गई प्रथम पुस्तक शालिहोत्रसंहिता है, जिसे शालिहोत्र ऋषि ने महाभारत काल से भी बहुत समय पूर्व लिखा था। कहा जाता है कि शालिहोत्र द्वारा अश्वचिकित्सा पर लिखत प्रथम पुस्तक होने के कारण प्राचीन भारत में पशुचिकित्सा विज्ञान को 'शालिहोत्रशास्त्र' नाम दिया गया।

शालिहोत्रसंहिता का वर्णन आज संसार की अश्वचिकित्सा विज्ञान पर लिखी गई पुस्तकों में दिया जाता है। भारत में अनिश्चित काल से देशी अश्वचिकित्सक 'शालिहोत्री' कहा जाता है।

शालिहोत्रसंहिता में 48 प्रकार के घोड़े बताए गए हैं। इस पुस्तक में घोड़ों का वर्गीकरण बालों के आवर्तों के अनुसार किया गया है। इसमें लंबे मुँह और बाल, भारी नाक, माथा और खुर, लाल जीभ और होठ तथा छोटे कान और पूँछवाले घोड़ों को उत्तम माना गया है। मुँह की लंबाई 2 अंगुल, कान 6 अँगुल तथा पूँछ 2 हाथ लिखी गई है। घोड़े का प्रथम गुण 'गति का होना' बताया है। उच्च वंश, रंग और शुभ आवर्तोंवाले अश्व में भी यदि गति नहीं है, तो वह बेकार है। शरीर के अंगों के अनुसार भी घोड़ों के नाम , त्रयण्ड (तीन वृषण वाला), त्रिकर्णिन (तीन कानवाला), द्विखुरिन (दोखुरवाला), हीनदंत (बिना दाँतवाला), हीनांड (बिना वृषणवाला), चक्रवर्तिन (कंधे पर एक या तीन अलकवाला), चक्रवाक (सफेद पैर और आँखोंवाला) दिए गए हैं। गति के अनुसार तुषार, तेजस, धूमकेतु, एवं ताड़ज नाम के घोड़े बताए हैं। इस ग्रन्थ में घोड़े के शरीर में 12,000 शिराएँ बताई गई हैं। बीमारियाँ तथा उनकी चिकित्सा आदि, अनेक विषयों का उल्लेख पुस्तक में किया गया है, जो इनके ज्ञान और रुचि को प्रकट करता है। इसमें घोड़े की औसत आयु 32 वर्ष बताई गई है।

भारत में पशुचिकित्सा विज्ञान भी काफ़ी विकसित था। घोड़ों , हाथियों, गाय-बैलों की चिकित्सा से संबंधित अनेक ग्रंथ उपलब्ध हैं। 'शालिहोत्र' नामक पशु चिकित्सक के 'हय आयुर्वेद', 'अश्व लक्षण शास्त्र' तथा 'अश्व प्रशंसा' नाम के तीन ग्रंथ उपलब्ध हैं। इनमें घोड़ों के रोगों और उनके उपचार के लिए औषधियों का विवरण है। इन ग्रंथों के अनुवाद अनेक विदेशी भाषाओं में हुए। मुनि पालकप्य के 'हास्ते-आयुर्वेद' में हाथियों की शरीर रचना तथा उनके रोगों का विवरण, उनके रोगों की शल्य क्रिया और औषधियों द्वारा चिकित्सा, देखभाल और आहार का विवरण चरक और सुश्रुत की संहिताओं में भी मिलता है।

बौधायन

बौधायन भारत के प्राचीन गणितज्ञ और शुल्ब सूत्र तथा श्रौतसूत्र के रचयिता थे।

ज्यामिति के विषय में प्रमाणिक मानते हुए सारे विश्व में यूक्लिड की ही ज्यामिति पढ़ाई जाती है। मगर यह स्मरण रखना चाहिए कि महान यूनानी ज्यामितिशास्त्री यूक्लिड से पूर्व ही भारत में कई रेखागणितज्ञ ज्यामिति के महत्वपूर्ण नियमों की खोज कर चुके थे, उन रेखागणितज्ञों में बौधायन का नाम सर्वोपरि है। उस समय भारत में रेखागणित या ज्यामिति को शुल्व शास्त्र कहा जाता था। बौधायन के सूत्र वैदिक संस्कृत में हैं तथा धर्म, दैनिक कर्मकाण्ड, गणित आदि से सम्बन्धित हैं। वे कृष्ण यजुर्वेद के तैत्तिरीय शाखा से सम्बन्धित हैं। सूत्र ग्रन्थों में सम्भवतः ये प्राचीनतम ग्रन्थ हैं। इनकी रचना सम्भवतः 8वीं-7वीं शताब्दी ईसापूर्व हुई थी।

बौधायन सूत्र के अन्तर्गत निम्नलिखित 6 ग्रन्थ आते हैं-

1. बौधायन श्रौतसूत्र - यह सम्भवतः 19 प्रश्नों के रूप में है।
2. बौधायन कर्मान्तसूत्र - 21 अध्यायों में
3. बौधायन द्वैधसूत्र - 4 प्रश्न
4. बौधायन गृह्यसूत्र - 4 प्रश्न
5. बौधायन धर्मसूत्र - 4 प्रश्नों में
6. बौधायन शुल्बसूत्र - 3 अध्यायों में

सबसे बड़ी बात यह है कि बौधायन के शुल्बसूत्रों में आरम्भिक गणित और ज्यामिति के बहुत से परिणाम और प्रमेय हैं, जिनमें 2 का वर्गमूल का सन्निकट मान, तथा पाइथागोरस प्रमेय का एक कथन शामिल है। बौधायन प्रमेय या पाइथागोरस प्रमेय समकोण त्रिभुज से सम्बन्धित पाइथागोरस प्रमेय सबसे पहले महर्षि बोधायन की देन है। पायथागोरस का जन्म तो ईसा के जन्म के 8 वी शताब्दी पहले हुआ था जबकि हमारे यहाँ इसे ईसा के जन्म के 15 वी शताब्दी पहले से ही ये पढ़ायी जाती थी। बौधायन का यह निम्न लिखित सूत्र है : दीर्घचतुरश्रस्याक्ष्णया रज्जुः पार्श्वमानी तिर्यग् मानी च यत् पृथग् भूते कुरूतस्तदुभयं करोति ॥ विकर्ण पर कोई रस्सी तानी जाय तो उस पर बने वर्ग का क्षेत्रफल ऊर्ध्व भुजा पर बने वर्ग तथा क्षैतिज भुजा पर बने वर्ग के योग के बराबर होता है। यह कथन 'पाइथागोरस प्रमेय' का सबसे प्राचीन लिखित कथन है।

बौधायन श्लोक संख्या i.61-2 (जो आपस्तम्ब i.6 में विस्तारित किया गया है) किसी वर्ग की भुजाओं की लम्बाई दिए होने पर विकर्ण की लम्बाई निकालने की विधि बताता है। दूसरे शब्दों में यह 2 का वर्गमूल निकालने की विधि बताता है।

समस्य द्विकर्णि प्रमाणं तृतीयेन वर्धयेत।

तच् चतुर्थेनात्मचतुस्त्रिशोनेन सविशेषः।।

किसी वर्ग का विकर्ण का मान प्राप्त करने के लिए भुजा में एक-तिहाई जोड़कर, फिर इसका एक-चौथाई

जोड़कर, फिर इसका चौतीसवाँ भाग घटाकर जो मिलता है वही लगभग विकर्ण का मान है।
अर्थात्

$$\sqrt{2} \approx 1 + \frac{1}{3} + \frac{1}{3 \cdot 4} - \frac{1}{3 \cdot 4 \cdot 34} = \frac{577}{408} \approx 1.414216,$$

यह मान दशमलव के पाँच स्थानों तक शुद्ध है।

वर्ग के क्षेत्रफल के बराबर क्षेत्रफल के वृत्त का निर्माण

चतुरस्रं मण्डलं चिकीर्षन्न् अक्षयार्धं मध्यात्प्राचीमभ्यापातयेत्।
यदतिशिष्यते तस्य सह तृतीयेन मण्डलं परिलिखेत्। । (I-58)

Draw half its diagonal about the centre towards the East-West line; then describe a circle together with a third part of that which lies outside the square.

अर्थात् यदि वर्ग की भुजा 2a हो तो वृत्त की त्रिज्या r = [a+1/3(√2a – a)] = [1+1/3(√2 – 1)] a

वृत्त के क्षेत्रफल के बराबर क्षेत्रफल के वर्ग का निर्माण

मण्डलं चतुरस्रं चिकीर्षन्विष्कम्भमष्टौ भागान्कृत्वा भागमेकोनत्रिशधा
विभाज्याष्टाविशतिभागानुद्धरेत् भागस्य च षष्ठमष्टमभागोनम् ॥ (I-59))[1]

If you wish to turn a circle into a square, divide the diameter into eight parts and one of these parts into twenty-nine parts: of these twenty-nine parts remove twenty-eight and moreover the sixth part (of the one part left) less the eighth part (of the sixth part).

बौधायन के अन्य प्रमेय

बौधायन द्वारा प्रतिपादित कुछ प्रमुख प्रमेय ये हैं-

किसी आयत के विकर्ण एक दूसरे को समद्विभाजित करते हैं।

समचतुर्भुज (रोम्बस) के विकर्ण एक-दूसरे को समकोण पर समद्विभाजित करते हैं

किसी वर्ग की भुजाओं के मध्य बिन्दुओं को मिलाने से बने वर्ग का क्षेत्रफल मूल वर्ग के क्षेत्रफल का आधा होता है।

किसी आयत की भुजाओं के मध्य बिन्दुओं को मिलाने से समचतुर्भुज बनता है जिसका क्षेत्रफल मूल आयत के क्षेत्रफल का आधा होता है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि बौधायन ने आयत, वर्ग, समकोण त्रिभुज समचतुर्भुज के गुणों तथा क्षेत्रफलों का विधिवत अध्ययन किया था। यज शायद उस समय यज्ञ के लिए बनायी जाने वाली 'यज्ञ भूमिका' के महत्व के कारण था।

नाम में द्विरूपता

"बौधायन" तथा "बौधायनीय" शब्दों के लिए "बोधायन" या "बोधायनीय" का प्रयोग दक्षिण भारत में बहुधा किया जाता है। परन्तु संभवतः यह गलत है क्योंकि -अयन शब्द के प्रयोग में पहले वर्ण का स्वर दीर्घ हो जाता है। जैसे- "द्वैपायन", जो "द्वीप" व "अयन" पर विभिन्न व्याकरणीय नियम लगाकर बना है।